अध्याय द्वितीय

भारत में नगरीय स्थानीय स्वशासन का उद्‌भव एवं विकास

- प्राचीनकाल में नगरीय स्थानीय स्वशासन
- मध्यकाल में नगरीय स्थानीय स्वशासन
- ब्रिटिशकाल में नगरीय स्थानीय स्वशासन
- स्वतन्त्र भारत में नगरीय स्थानीय स्वशासन
- 74वाँ संविधान संशोधन अधिनियम 1992

अध्याय द्वितीय

भारत में नगरीय स्थानीय स्वशासन का उद्‌भव एवं विकास

भारत में स्थानीय स्वशासन का इतिहास काफी पुराना है। सिन्धु घाटी सभ्यता काल प्रशासन (2250 ई. पूर्व से 1750 ई. पूर्व तक) का केवल अनुमान लगाया जा सकता है। लिखित साक्ष्यों के अभाव में सिन्धु सभ्यताकालीन राजनीतिक एवं प्रशासनिक स्थिति का निर्धारण करना अत्यन्त कठिन है। पिगट का अभिमत है कि मोहनजोदड़ो और हड़प्पा साम्राज्य अच्छे ढंग से शासित साम्राज्य थे। सिन्धु घाटी सभ्यता में सुनियोजित सड़कों तथा नालियों की व्यवस्था थी। इससे यह प्रतीत होता है कि नगरपालिकाएँ थीं, जो नगरों की समुचित व्यवस्था करती थीं। सिन्धु घाटी सभ्यता के क्षेत्र में एक ही प्रकार के भवनों का निर्माण होता था, एक ही प्रकार की मूर्तियां बनायी जाती थी, एक ही माप–तोल प्रचलित था, एक ही लिपी का प्रचलन था। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि सम्पूर्ण सिन्धु प्रदेश एक ही विशाल साम्रज्य में संगठित था। इस प्रदेश में एक संगठन, एक व्यवस्था तथा एक ही शासन की सत्ता थी। किन्तु आगे चलकर वैदिक, उत्तरवैदिक, रामायण एवं महाभारत, स्मृति काल में ग्राम तथा ग्रामीण प्रशासन की प्रधानता रही है।

नगरीय स्थानीय संस्थाओं का अस्तिव गुप्त, सल्तनत एवं मुगल युग तक कम या अधिक स्वरूप में विद्यमान रहा है। वर्तमान में नगरीय स्थानीय स्वशासन कि जो संस्थाएँ विद्यमान है उनका विकास अंग्रेजी शासन की देन है। ये संस्थाएँ आज निर्वाचक मण्डल के प्रति उत्तरदायी हैं। इन्हें विकास, प्रशासन तथा करारोपण की शक्तियाँ प्राप्त हैं। यह प्रजातन्त्र की पाठशाला के रुप में कार्य कर रही हैं। आज इन्हें संवैधानिक दर्जा प्राप्त है। नगरीय स्थानीय स्वशासन के विकास को हम निम्न भागों में काल विभाजित कर देख सकते हैं–

- प्राचीनकाल में नगरीय स्थानीय स्वशासन

- मध्यकाल में नगरीय स्थानीय स्वशासन
- ब्रिटिशकाल में नगरीय स्थानीय स्वशासन
- स्वतन्त्र भारत में नगरीय स्थानीय स्वशासन

प्राचीनकाल में नगरीय स्थानीय स्वशासन

भारतीय वैदिक कालीन ग्रन्थों में भी सभा और समितियों जैसी लोकतान्त्रिक संस्थाओं का वर्णन मिलता है यह सभा और समितियाँ प्रशासन के क्षेत्र में अपने स्वामी को सहयोग प्रदान करती थीं । रामायण युग में जनपदों का भी अस्तित्व था । तत्कालीन व्यवस्थाओं में जनपदों को ग्रामीण गणराज्यों के सघों के रूप में जाना जाता था[1]।

महाभारत कालीन व्यवस्था में भी सभा जैसी संस्थाओं का आस्तिव बना हुआ था। मनु स्मृति के अनुसार "ग्रामीण शासन के लिए जो कर्मचारी उत्तरदायी होता था उसे "ग्रामीक" के नाम से जाना जाता था"। इस पदाधिकारी का प्रमुख कार्य ग्रामवासियों से करों को एकत्रित करना था ।

मध्यकाल में नगरीय स्थानीय स्वशासन

मौर्यकाल

मौर्यकाल में स्थानीय शासन विकसित था। विशाल साम्राज्य में एक केन्द्रिय सरकार की स्थापना होते हुये भी ग्रामीण शासन को अपने विषयों में पूर्णतः स्वतन्त्रता प्राप्त थी। नियमानुसार कार्य किये जाते थे और नियम तोडने वालों को दण्ड की व्यवस्था की गई थी। तत्कालीन स्थानीय सस्थाएँ सफाई आदि कार्यों पर विशेष ध्यान देती थीं।

गुप्तकाल

गुप्तकालीन शासन प्रणाली में केन्द्र व प्रान्त दोनों अत्यन्त सुव्यवस्थित थे। प्रशासनिक सुविधा के लिये गुप्त साम्राज्य अनेक प्रान्तों में विभक्त था। नगर की व्यवस्था के लिये एक नगरपरिषद होती थी। इस प्रकार भारत में लोकतन्त्र विदेशी उपज नहीं था। मुगल

[1] **दीक्षित, प्रेम कुमारी, महाभारत में राज्य व्यवस्था, अर्चाना प्रकाशान**, लखनऊ 1970

एवं ब्रिटिश शासन के आगमन से शताब्दियों पूर्व स्वशासकीय सस्थाओं एवं सामुदायिक जीवन पर बल दिया जाता था ।

मुगलकाल

भारतीय शासन के मुगलकाल में सत्ता के केन्द्रीयकरण की प्रवृति बढ़ी जिसमें सत्ता की सम्पूर्ण शक्ति दिल्ली के सुल्तान के हाथों में थी और सुल्तान निरंकुश शासक थे जो केन्द्रीयकृत नौकरशाही में विश्वास करते थे। नगर का प्रशासन "कोतवाल" के हाथों में था। उसके विविध कार्य थे, यथा सार्वजनिक सुविधाओं जैसे जल आपूर्ति, कुओं की देखभाल करना, यात्रियों की सुविधाओं की व्यवस्था, सार्वजनिक भवनों की देखभाल, बाजारों का पर्यवेक्षण, माप एवं तौल के यन्त्रों का निरीक्षण, खाद्य–पदार्थों में मिलावट को रोकना आदि था।

ब्रिटिशकाल में नगरीय स्थानीय स्वशासन

भारत में स्थानीय स्वशासन संस्थाएँ प्राचीन काल से विद्यमान रही हैं। किन्तु इन्हें व्यवस्थित सुसगंठित रूप ब्रिटिश शासनकाल में ही प्रदान किया गया। अग्रेंजी शासन काल में नगरीय स्थानीय स्वायत्त शासन में सस्थाओं के विकास को इस प्रकार देख सकते हैं –

* वर्तमान नगरीय संस्थाओं का आरम्भ ब्रिटिश शासन के दौरान 1687 में "मद्रास कोरपोरेशन" की स्थापना से हुआ है।
* इसके बाद 1726 में बम्बई (वर्तमान मुम्बई) और कलकत्ता (वर्तमान कोलकात्ता) में नगर निगम की स्थापना की गई।
* 1870 में लार्डमैयो के ब्रिटिश विकेन्द्रीयकरण के प्रस्ताव ने नगरीय स्वशासन के विकास को नई दिशा दी।
* 1882 में लार्ड रिपन ने व्यापक आधार पर नगरपालिकाओं का गठन किया ।

प्रथमकाल–1687 से 1881 का युग

1687 में मद्रास में नगर निगम की स्थापना ब्रिटिश सम्राट जेम्स द्वितीय द्वारा की गई। नगर निगम में एक निगमाध्यक्ष, एक नगर वृद्ध (एल्डर मैन) तथा एक नगर प्रतिनिधि सम्मिलित होता था। उन्हें कुछ कर लगाने का अधिकार दिया गया था जिन्हें वे एक नगर भवन (टाउनहॉल) एक कारागार व एक स्कूल का भवन बनाने में खर्च कर सकते थे। किन्तु लोंगो ने करारोपण का प्रतिरोध किया। 1726 में नगर निगम के स्थान पर एक नगराध्यक्ष का न्यायालय की स्थापना की गई। जिसका स्वरूप प्रशासनिक न होकर न्यायिक अधिक था। 1793 में चार्टर एक्ट के द्वारा मद्रास, बम्बई, कलकत्ता में नगर प्रशासन की स्थापना की गई। इस अधिनियम के अनुसार भारत के गर्वनर जनरल को इन तीन शहरों में शान्ति एवं दण्डाधिकारियों को नियुक्त करने का अधिकार दिया गया। इनका कार्य शहर में सफाई, पुलिस व्यवस्था तथा सड़को का रखरखाव ,भवनों तथा भूमि पर कर लगाने का था। एक और प्रयास 1842 में दक्षिण बंगाल "पीपुल्स एक्ट" के तहत किया गया, जिसके अनुसार म्यूनिसिपल प्रशासन की स्थापना उस शहर के 2/3 निवासियों के प्रतिवेदन के बाद की जा सकती थी। लेकिन यह अधिनियम निरर्थक रहा।

1850 में सम्पूर्ण देश के लिये एक अधिनियम पारित किया गया और उसमें पहले की संविधियों के विपरित अप्रत्यक्ष करारोपण का प्रावधान किया गया। 1863 में राजकीय सैनिक स्वास्थ्य आयोग ने भारतीय नगरों की गन्दी स्थिति के सम्बन्ध में चिन्ता व्यक्त की फलस्वरूप अनेक अधिनियम पारित किये गये जिसके अनुसार भारत में स्थानीय शासन की स्थापना करने के लिए ऐच्छिकता के सिद्धान्त का अनुसरण किया गया।

1870 मे लार्ड मेयो के प्रस्ताव "शक्ति का विकेन्द्रीकरण " का समर्थन किया गया।

जिसका उद्देश्य केन्द्र से कुछ शक्तियाँ और कार्य लेकर प्रान्तों को दिये जायें। इस

प्रस्ताव द्वारा स्वशासन का विकास करने, म्युनिसिपल सस्थाओं को सशक्त बनाने तथा भारतीय और यूरोपीय लोगों को प्रशासनिक मामलों मे पहले सें कहीं अधिक सीमा तक सम्बद्ध करने का अवसर दिया गया।

इस काल की मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार है–

* भारत में स्थानीय स्वशासन प्रथमतः ब्रिटिश स्वार्थों को सिद्ध करने के लिए स्थापित किया गया था, न कि देश में स्वशासी सस्थाओं का विकास करने के लिये।
* स्थानीय शासन की संस्थाओं पर अंग्रेजों का आधिपत्य था, अतः भारतीयों को इनमें भाग लेने के समुचित अवसर नहीं मिल पाते थे।
* भारत में स्थानीय शासन का उद्देश्य केन्द्रीय सरकार की वित्तीय कठिनाईयों को कम करने के उद्देश्य से किया गया था।
* स्थानीय संस्थाओं की सदस्यता के आधार के रूप में निर्वाचन की प्रणाली को मध्य प्रदेश के अतिरिक्त कहीं लागू नही किया गया था। 1881 में पाँच में से चार नगरपालिकाएँ पूर्णतः नामित संस्थाएँ थी।

द्वितीयकाल–1882 से 1919 का युग

1882 में भारत के तत्कालीन वायॅसराय लार्ड रिपन के प्रमुख सुधारों को स्थानीय शासन के संदर्भ में मेग्नाकार्टा के नाम से पुकारा जाता था, रिपन के अनुसार स्थानीय सस्थाएँ ही राजनीतिक शिक्षा प्रदान करने का महत्त्वपूर्ण माध्यम होतीं हैं। इनका मुख्य उद्देश्य प्रशासन को कुशल बनाना ही नहीं अपितु लोकप्रिय, स्वतन्त्र, शिक्षित तथा जनता की भागीदारी से युक्त बनाना भी था। रिपन ने अपने प्रस्ताव में निम्नलिखित बिन्दुओं को स्थान दिया –

* स्थानीय निकायों में अधिकतर गैर सरकारी सदस्य और अध्यक्ष होने चाहिए।
* स्थानीय निकायों पर राज्य का नियन्त्रण अप्रत्यक्ष होना चाहिए न कि प्रत्यक्ष।
* इन निकायों के पास अपने कार्यों को पूरा करने के लिए समुचित वित्तिय

साधन होने चाहिए।

* स्थानीय शासन के कर्मचारी स्थानीय निकायों के प्रशासनिक नियन्त्रण के अर्न्तगत काम करें।
* 1882 के प्रस्ताव की व्याख्या प्रान्तीय सरकारें प्रान्तों में विद्यमान स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार स्वंय कार्य करें।

लार्ड रिपन के प्रस्ताव में निहित उद्देश्यों को पसंद नही किया इस कारण यह प्रस्ताव बहुत सफल नही रहा।

1909 में स्थानीय शासन के इतिहास ने एक अन्य महत्वपूर्ण अवस्था में प्रवेश किया। 1909 में राजकीय विकेन्द्रीकरण आयोग की स्थापना की गई । जिसके अनुसार–

* गाँव को स्थानीय शासन की बुनियादी इकाई माना और प्रत्येक गाँव में पचायँत हो,
* स्थानीय निकायों में निर्वाचित सदस्यों का पर्याप्त बहुमत होना चाहिये ।
* नगरपालिका अपना अध्यक्ष स्वयं चुने ।
* नगरपालिकाओं को आवश्यक शक्तियाँ प्रदान की जानी चाहिए, जिससे वे कर निर्धारित कर सकें ।
* स्थानीय निकायों का अपने कर्मचारियों पर पूर्ण नियन्त्रण होना चाहिए ।
* स्थानीय निकायों पर बाहरी नियन्त्रण,परामर्श ,सुझाव और लेखापरीक्षण तक सीमित होना चाहिए ।
* नगरपालिकाओं की ऋण लेने की शक्ति पर सरकारी नियन्त्रण हो ।
* प्राथमिक शिक्षा का उत्तरदायित्व नगरपालिका पर होना चाहिए।

किन्तु 1918 तक कोई विशेष प्रगति नहीं हुई । उस वर्ष भारत सरकार ने एक प्रस्ताव पारित किया। प्रस्ताव में निम्नलिखित सुझाव सम्मिलित थे–

* गाँवों में पचायतों को पुनर्जीवित किया जाए।

* स्थानीय निकायों में निर्वाचित सदस्यों का पूर्ण बहुमत हो।
* स्थानीय शासन को मताधिकार का विस्तार करके व्यापक आधार प्रदान किया जाए।
* स्थानीय निकाय का सदस्य नामित न होकर जनता द्वारा चुना हुआ व्यक्ति होना चाहिए।
* स्थानीय निकायों को बजट बनाने, कर लगाने तथा कार्यों को स्वीकृत करने की स्वतन्त्रता हो।

तृतीयकाल–1920 से 1936 का युग

1920 में 1919 के भारतीय शासन अधिनियम को लागू किया गया। इस प्रकार 1919 के भारतीय शासन अधिनियम ने स्थानीय शासन के क्षेत्र में नवीन अभिरूचि और क्रियाकलाप का एक नया युग प्रारम्भ किया। स्थानीय शासन को प्रान्तों के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत चलाया गया और फिर उस पर जनता के प्रतिनिधियों का नियन्त्रण स्थापित हो गया। नगरपालिका का गठन निर्वाचन प्रक्रिया द्वारा किया जाने लगा। नगर निकायों को प्रशासकीय, वित्तीय, न्यायिक शक्तियाँ व स्वतन्त्रता प्रदान की गई ।

* द्वैध शासन प्रणाली के फलस्वरूप स्थानीय स्वशासन को जनता द्वारा निर्वाचित मन्त्रियों के नियन्त्रण में सौंप दिया गया ।
* निर्वाचित मन्त्री विधान मण्डल के प्रति उत्तरदायी थे और पहले से अधिक विस्तृत मताधिकार के आधार पर चुने जाते थे ।
* लोकतंत्रीकरण के फलस्वरूप नगरपालिकाओं के प्रशासन में भ्रष्टाचार, पक्षपात तथा अकार्यकुशलता पनपने लगी थी।

चतुर्थकाल–1937 से 1947 का युग

भारत सरकार अधिनियम 1935, प्रान्तीय भागो में 1937 में लागू किया गया। जिसके तहत प्रान्तों में स्वायत्ता की स्थापना की गई। स्थानीय संस्थाओं को अब अधिक

कार्यभार, वित्तीय सुविधाएँ आदि बढ़ा दी गई और यह व्यवस्था 15 अगस्त 1947 में भारत की स्वाधीनता के पश्चात तक लागू रही इस काल की प्रमुख प्रवृतियाँ निम्नलिखित हैं।

* मद्रास में सदस्यो का मनोनयन बंद कर दिया गया। बिहार में भी मनोनयन समाप्त कर दिया गया।
* उत्तरप्रदेश में नगरपालिकाओं के निर्वाचन के लिए व्यस्क मताधिकार का नियम लागू किया गया। अब प्रेसिडेंट का प्रत्यक्ष निर्वाचन होने लगा। अन्य प्रदेशों में भी पहले से अधिक लोगों को इन निर्वाचनों में भाग लेने का अवसर देने का प्रयास किया गया।
* नगरपालिकाओं के कार्यक्षेत्र का विस्तार किया गया।
* उनकी आय बढ़ाने के उद्देश्य से प्रान्तीय सरकारों को अधिकार दिया गया जिससे कि उन्हें करारोपण के लिए बाध्य कर सके।
* स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्थानीय स्वशासन को उचित स्थान मिला। अब उसे वास्ताविक प्रजातंत्र की आधारशिला माना गया।
* कार्यकारिणी तथा वैधानिक शक्तियों को अलग–अलग करने का प्रयास किया गया। कार्यकारिणी शक्तियाँ प्रेसिडेंट या म्यूनिसिपल सेक्रटरी को सौंपी गई।
* नगरपालिकाओं पर प्रान्तीय सरकारों का नियन्त्रण कलक्टर के माध्यम से बनाए रखने का प्रयास किया।

स्वतन्त्र भारत में नगरीय स्थानीय स्वशासन

15 अगस्त 1947 को भारत की आजादी के बाद देश में स्थानीय स्वशासन का नवयुग प्रारम्भ हुआ। स्थानीय शासन को राज्यों की कार्य सूची के अन्तर्गत रखा गया है। स्वतंत्र भारत के सविंधान में स्थानीय स्वशासन का वही रूप रखा गया, जो ब्रिटिश शासन काल में प्रचलित था। 26 जनवरी 1950 को भारत का नया गणतन्त्रात्मक संविधान लागू किया गया। जिसमें स्थानीय स्वशासन राज्य सूची का विषय है। संविधान

में नगर निकायों के बारे में कुछ नही कहा गया है किन्तु ग्राम पंचायतो की चर्चा अवश्य की गई है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 40 के अनुसार राज्य पंचायतों का गठन करेगा तथा इस प्रकार की शक्तियाँ देगा कि वे स्थानीय शासन की इकाईयों के रूप में कार्य कर सकें।[1]

ग्रामीण स्थानीय स्वशासन के लिए बलवंत राय मेहता अध्ययन दल के सुझावों के फलस्वरूप त्रिस्तरीय योजना पंचायती राज व्यवस्था लागू की गई। नगरीय स्थानीय स्वशासन के लिए नगर निगम, नगरपालिकाएँ, नगरपरिषद्, नगर सुधार न्यास, पोर्ट ट्रस्ट समिति एवँ छावनी मण्डल स्थापित किए गये।

स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने इन निकायों की समस्याओं के समाधान, सगंठन, विकास तथा कार्यों, शक्तियों एवँ दायित्वों के संदर्भ में अनेक समितियों का गठन किया जिनमें से निम्नांकित उल्लेखनीय हैं –

1. 1949–51 स्थानीय वित्त जाँच समिति (पी. के. वत्तल)
2. 1953–54 कराधान जाँच समिति (जॉन मथाई)
3. 1963–65 नगर प्रशासन के कर्मचारियों के प्रशिक्षण–नगरीय सम्बन्ध में समिति,(नूरउदीन अहमद)
4. नगरीय स्थानीय निकायों के वित्तीय साधनों की वृद्वि के सम्बन्ध में मन्त्रियों की समिति, 1963 (रफीक जकारिया)
5. ग्रामीण नगरीय सम्बन्धों के विषय में समिति,1966(ए.पी.जैन)
6. 1974 में नगरीय प्रशासन के बजट सम्बन्धी सुधारों पर समिति (गिरजापति मुखर्जी)
7. 1982 नगरीय स्थानीय संस्थाओं तथा नगर निगमों के सविंधान, शक्तियों एवं विधियों के सम्बन्ध में अध्ययन समूह(के.एन. सहास)

---

1. **74वॉ संविधान संशोधन अधिनियम** 1992

8. 1985–88 शहरीकरण पर राष्ट्रीय आयोग (सी.एम.कोरिया)

1. स्थानीय वित्त समिति 1949–51 (पी.के. वत्तल)

प्रांतीय स्थानीय शासन मंत्रियों का सम्मेलन केन्द्रीय सरकार के तत्कालीन स्वास्थ्य मंत्री राजकुमारी अमृतकौर के सभापतित्व में अगस्त, 1948 में हुआ। इस सम्मेलन में यह प्रस्ताव पास किया कि स्थानीय स्वायत्त शासन संस्थाओं को उपलब्ध वित्तीय साधन अपर्याप्त हैं और उपलब्ध साधनों का भी पूरी तरह उपयोग नहीं किया जाता है। सम्मेलन में केन्द्रीय सरकार से आग्रह किया कि इन संस्थाओं की वित्तीय स्थिति की जाँच करने तथा उसमें सुधार के लिए सुझाव देने के लिए एक समिति की स्थापना की जाये। फलतः स्वास्थ्य मंत्रालय ने सन् 1949 में श्री पी.के. वत्तल की अध्यक्षता में एक समिति की नियुक्ति की। अध्यक्ष के अतिरिक्त उसमें आठ अन्य सदस्य और भी थे। समिति ने निम्न कर स्त्रोतों को इन संस्थाओं के लिए सुरक्षित करने का परामर्श दिया–

- रेल, समुद्र तथा वायुमार्ग से लाये गए माल तथा यात्रियों पर सीमांत कर।
- भूमि एवं भवन पर कर।
- खनिज अधिकारों (Mineral Right) पर कर।
- स्थानीय स्वास्थ्य शासन संस्थाओं के क्षेत्र में उपभोग उपयोग अथवा बिक्री के लिए लाये गए माल पर कर।
- बिजली के उपभोग एवं बिक्री के लिए लाये गए माल पर कर।
- समाचार पत्रों में प्रकाशित विज्ञापनों को छोड़ कर अन्य विज्ञापनों पर कर।
- नावों तथा पशुओं पर कर।
- पथ कर, मनोरंजन कर, प्रति व्यक्ति कर।

इसके अतिरिक्त समिति के कुछ अन्य सुझाव इस प्रकार थे–

- स्थानीय स्वायत्त शासन संस्थाओं को अधिनियम में निर्धारित सीमा के भीतर

करारोपण का अधिकार दिया जाना चाहिए। न्यूनतम दर पर कर अवश्य ही लगाया जाना चाहिए।

- यदि ये संस्थाएँ उचित दर पर करारोपण में आनाकानी करें तो पहले तो राज्य सरकारों को उन्हें इस संदर्भ उचित परामर्श देना चाहिए। यदि कोई संस्था फिर भी न माने तो राज्य सरकार को करारोपण तथा करो की दर में वृद्धि का अधिकार होना चाहिए।
- कराधान प्रगामी (Progessive) होना चाहिए।
- कराधान का अधिकार स्थानीय स्वायत्त शासन सस्थाओं को मिलना चाहिये, पर कर निर्धारण राज्य सरकार द्वारा किया जाना चाहिये। इसके लिए राज्य स्तर पर मूल्यांकन विभाग (Valuation Department) की स्थापना की जानी चाहिए।
- राज्य सरकार की सम्पत्ति पर स्थानीय कर लगाया जाना चाहिए। केन्द्रीय सरकार को सम्पत्ति की छूट मिलनी चाहिए। इसके बदले में केन्द्रीय सरकार स्थानीय संस्थाओं को उचित आर्थिक सहायता देगी।
- रेलवे प्रशासन की सम्पत्ति पर भी स्थानीय कर लगाया जाना चाहिए। इनके मूल्यांकन तथा कर निर्धारण के लिए संसद द्वारा अधिनियम बनाया जाना चाहिए।

2. कराधान जांच समिति 1953–54 (जॉन मथाई)

स्थानीय वित जांच समिति के दो वर्षों के भीतर ही इस समिति की नियुक्ति की गई। इसकी नियुक्ति भारत सरकार के वित मंत्रालय द्वारा की गई थी। इसमें अध्यक्ष श्री जॉन मथाई के अतिरिक्त पाँच अन्य सदस्य भी थे। समिति ने निम्न दस कर स्त्रोतों को इन संस्थाओं के उपयोग के लिए सुरक्षित रखने का सुझाव दिया।

- भूमि एवं भवन पर कर।

- चुंगी
- मशीन द्वारा चालित वाहनों को छोड़कर अन्य वाहनों पर कर।
- पशुओं एवं नावों पर कर।
- व्यापार, व्यवसाय, नौकरी आदि पर कर।
- समाचार पत्रों में प्रकाशित विज्ञापनों को छोड़कर अन्य विज्ञापनों पर कर।
- थियेटर कर।
- सम्पत्ति के हस्तांतरण पर कर।
- सड़क तथा आन्तरिक जल मार्ग से लाये गये यात्रियों तथा माल पर कर।
- पथ कर।

इसके अतिरिक्त आयोग ने यह भी कहा कि यदि राज्य सरकारें चाहें तो ओर भी कर स्त्रोत इन संस्थाओं के लिए उपलब्ध कराये जा सकते है। समिति के मतानुसार उपरोक्त सीमा अधिकतम होकर न्यूनतम थी। समिति का यह मत था कि बड़ी नगरपालिकाओं तथा निगमों को अधिक करारोपण की शक्तियाँ दी जानी चाहिए। समिति के कुछ अन्य प्रमुख सुझाव इस प्रकार थे–

- स्थानीय संस्थाओं तथा राज्य सरकारों के बीच परस्पर व्यापी(Over lapping) तथा असमन्वित कर व्यवस्था नहीं होनी चाहिए।

- पूंजीगत आवश्यकताओं के लिए स्थानीय स्वायत्त शासन संस्थाओं को ऋण लेने की सुविधा होनी चाहिए। चुंकी इन संस्थाओं की साख समिति होती है अतः यदि आवश्यक हो तो इनके ऋणों के लिए राज्य को गारंटी देनी चाहिए।

3. म्यूनिसिपल कर्मचारियों के प्रशिक्षण की समिति 1963

इस समिति ने केन्द्रीय स्तर पर म्यूनिसिपल कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए एक संस्थान स्थापित करने का सुझाव दिया। केन्द्रीय संस्थान के अतिरिक्त राज्य स्तर पर

राज्य संस्थाओं को स्थापित करने का सुझाव भी दिया गया। केन्द्रीय संस्थान की अधिकतर सीमा में मुख्य रूप से निम्नलिखित बातें रखी गई।

- अग्रिम (Advanced) प्रशिक्षण के ऐसे कार्यक्रम संचालित करना जिन्हें आर्थिक तथा तकनीकि कठिनाइओं के कारण राज्य संस्थान संचालित न कर सके।
- देशभर में संचालित प्रशिक्षण के कार्यक्रमों में समन्वय स्थापित करना।
- प्रशिक्षण कार्यक्रमों के स्तर में एकरूपता लाना।

भारत सरकार ने समिति के सुझावों को स्वीकार कर लिया था। सन् 1966 में दिल्ली में भारतीय लोक प्रशासन संस्थान के अंग के रूप में म्यूनिसिपल प्रशासन में प्रशिक्षण एवं अनुसंधान केन्द्र की स्थापना की गई। थोड़े ही समय बाद लखनऊ, बम्बई, कलकत्ता तथा हैदराबाद में चार क्षेत्रीय केन्द्रो की स्थापना की गई।

म्यूनिसिपल प्रशासन में प्रशिक्षण एवं अनुसंधान केन्द्र को भारत सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन मंत्रालय तथा निर्माण, आवास एवं शहरी विकास मंत्रालयों से अनुदान प्राप्त होता है।

केन्द्र नगर प्रशासन की समस्याओं के विषय में राष्ट्रीय जागरूकता लाने के लिए सक्रिय हैं। अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए केंन्द्र निम्नलिखित कार्यक्रमों को संचालित करता है–

- म्यूनिसिपल कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम ।
- सेमीनारों का आयोजन।
- सम्मेलनों का आयोजन।
- अनुसंधान कार्यक्रम
- म्यूनिसिपल प्रशासन के क्षेत्र में परामर्श सेवाएँ।
- एक त्रैमासिक पत्रिका 'नगर लोग' प्रकाशित करता है।

केन्द्र में एक डाक्यूमेन्टेशन यूनिट की स्थापना की गई है। इस यूनिट में विभिन्न राज्यों

की स्वायत्त शासन संस्थाओं के प्रशासन से सम्बन्धित प्रलेख आदि एकत्रित किये जाते हैं।

4. रूरल–अरबन रिलेशनशिप समिति की स्थापना 1963–66 (ए.पी. जैन)

भारत सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन मंत्रालय के द्वारा सन् 1963 में रूरल–अरबन रिलेशनशिप समिति की स्थापना की गई थी। इस समिति की नियुक्ति का सुझाव स्थानीय स्वायत्त शासन की केन्द्रीय समिति ने अपनी आठवीं बैठक में एक प्रस्ताव पास कर के दिया था। प्रारम्भ में श्री बलवन्त राय मेहता को समिति का चैयरमैन नियुक्त किया गया था। बाद में श्री अजित प्रसाद जैन को चेयरमैन नियुक्त किया गया । चेयरमैन के अतिरिक्त समिति में 9 अन्य सदस्य और थे।

समिति ने तीन वर्षों तक परिश्रम करके तीन खण्ड़ों में प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। शहरी स्वायत्त शासन संस्थाओं के गठन, कार्मिक प्रशासन, वित्तीय व्यवस्था तथा सरकार द्वारा उन पर नियन्त्रण के क्षेत्र में अनेक सुझाव रखे गये। समिति के कुछ महत्वपूर्ण सुझाव निम्न हैं–

- विभिन्न अधिनियमों में इन संस्थाओं से सम्बन्धित पुराने अधिनियमों के स्थान पर नये अधिनियम बनाये जाएँ। नगर निगमों को छोड़कर अन्य सभी शहरी स्वायत्त शासन संस्थाओं के लिए एक ही अधिनियम बनाया जाना चाहिए।

- नगर निगमों की स्थापना उन्हीं शहारों में की जानी चाहिए जहाँ की जनसंख्या 5 लाख हो तथा आय 1 करोड़ रूपये प्रतिवर्ष से अधिक हो।

- नगरपालिकाओं की अधिकतम सदस्य संख्या 45 होनी चाहिए । समिति ने विभिन्न प्रकार की नगरपालिकाओं के लिए अलग–अलग सदस्य संख्या का सुझाव भी दिया।

जनसंख्या	सदस्य संख्या
20,000 से 50,000	15 से 25
50,000 से 1,00,000	25 से 35
1,00,000 से 5,00,000	35 से 45

- इन संस्थाओं में संवैधानिक तथा असंवैधानिक दोनों प्रकार की समितियाँ होनी चाहिए।
- समिति ने इन संस्थाओं के लिए राज्य स्तर काडर का समर्थन किया। उन्होंने प्रशासकीय सेवाओं, इन्जीनियरिंग सेवाओं ,चिकित्सा सेवाओं तथा शिक्षण सेवाओं के लिए राज्य स्तर के काडरों की सिफारिश की।
- इन संस्थाओं के अधिकारियों एवं कर्मचारियों को राज्य के अधिकारियों तथा कर्मचारियों के समान ही वेतन, भत्ते तथा अन्य सुविधाएँ उपलब्ध कराई जानी चाहिए।
- समिति ने कराधान जाँच आयोग की सिफारिश से सहमति प्रकट की।
- समिति ने इन संस्थाओं द्वारा करारोपण तथा उनकी दर परिवर्तन आदि की प्रक्रिया को सरल बनाने पर जोर दिया। राज्य तथा केन्द्र सरकारों को इन संस्थाओं के प्रति सकारात्मक रवैया अपनाना चाहिए जिससे कि इन संस्थाओं की कार्यक्षमता बढ़ सके।
- राज्य सरकारों द्वारा नियन्त्रण के क्षेत्र में राजनीतिक कारणों से भेद–भाव नहीं किया जाना चाहिए।
- राज्य सरकारों द्वारा नियन्त्रण इस प्रकार किया जाना चाहिए कि इन संस्थाओं की भूलों तथा अनियमितताओं का समय रहते पता चल जाये और तुरन्त कार्यवाही की जा सके। इससे इन संस्थाओं का अधिक्रमण करने अथवा इन्हें भंग किये जाने की आवश्यकता काफी कम हो जायेगी।

5. शहरी स्थानीय निकायों की वित आपूर्ति हेतु मंत्रियों की समिति 1963 (रफीक जकारिया)

स्थानीय स्वायत्त शासन की केन्द्रीय समिति ने अपनी आठवीं बैंठक में सन् 1963 में इस समिति की नियुक्ति की थी। केन्द्रीय समिति का मत था कि वर्तमान वित्तीय साधन इन संस्थाओं की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त नहीं हैं। उन्होंने विचार व्यक्त किया कि

निम्नालिखित सूचनाएँ एकत्रित की जानी चाहिए–

(अ) किन–किन प्रकार के कर इन संस्थाओं द्वारा लगाये जा सकते हैं।

(ब) कौन–कौन से कर वास्तव में इन संस्थाओं द्वारा लगाये जा रहे हैं।

(स) लगाये गये करों की राशि वास्तव में कितनी प्रतिशत वसूल हो पाती है।

इन समस्याओं के अध्ययन के लिए केन्द्रीय समिति ने महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, मद्रास तथा आन्ध्रप्रदेश के स्वायत्त शासन मन्त्रियों की एक समिति की नियुक्ति की । उसके अध्यक्ष महाराष्ट्र के स्वायत्त शासन मंत्री रफीक जकारिया नियुक्त किये गये। समिति की सहायता के लिए एक उपसमिति भी नियुक्त की गई जिसमें महाराष्ट्र, मद्रास, पश्चिमी बंगाल, आन्ध्रप्रदेश, पंजाब तथा करेल राज्यों के स्थानीय स्वायत्त शासन विभागों के वरिष्ठ अधिकारी सदस्य सम्मिलित थे।

इस समिति की महत्तवपूर्ण सिफारिशें इस प्रकार थीं–

- नगर विकास की सभी योजनाएँ उचित प्रकार से समन्वित की जानी चाहिए। यह भी निर्धारित कर दिया जाना चाहिए कि व्यय का कितना प्रतिशत ये संस्थाएं वहन करेगीं और राज्य सरकार का कितना योगदान होगा। राज्य सरकार का हिस्सा राज्य के योजना व्यय में सम्मिलित कर लिया जाना चाहिए।

- प्रत्येक राज्य में शहरी विकास बोर्ड स्थापित किया जाना चाहिए। विकास बोर्ड शहर के विकास की योजना तथा जलदाय, नाली योजना आदि का कार्यभार सम्भालेगा।

- सम्पत्ति कर इस प्रकार लगाया जाना चाहिए कि इससे अधिकतम लाभ हो। इसके लिए उन्होंने केन्द्रीय मुल्यांकन विभाग की स्थापना पर जोर दिया। उनका मत था कि किराया नियन्त्रण वाले क्षेत्रों में सम्पत्ति कर नियन्त्रित किराये पर वसूल नहीं किया जाना चाहिए।
- इन संस्थाओं के लिए करो की वसूली का प्रतिशत निर्धारित किया जाना चाहिए। यदि किसी संस्था में निर्धारित प्रतिशत की वसूली नहीं होती है तो सम्बन्धित अधिकारियों के विरूद्ध कार्यवाही की जानी चाहिए।
- केन्द्रीय तथा राज्य सरकार की सम्पत्ति पर भी स्थानीय कर लगाये जाने चाहिए।
- चुंगी के स्थान पर धीरे–धीरे पण्यावर्त कर (Turn Over tax) अथवा विक्रय कर पर सरचार्ज (Surcharge) लगाया जाना चाहिए।
- इस संस्थाओं को ऐसे व्यवसायिक कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, जिनसे वे अपने लिए आय के नये स्त्रोत तैयार कर सकें।
- कराधान जांच आयोग द्वारा इन संस्थाओं के लिए कुछ करों को सुरक्षित करने के सुझाव का इस समिति ने अनुमोदन किया था।
- प्रत्येक राज्य में इन संस्थाओं को दिये जाने वाले अनुदान को नियन्त्रित करने के लिए अनुदान कोड (Grant-in aid code) बनाने सुझाव दिया गया।
- यायावर जनसंख्या (Floating Population) से कर वसूल करने के उद्देश्य से बस तथा रेल की टिकटों पर अधिक कर लगाने का सुझाव दिया गया ।

6. नगरीय संस्थाओं के कार्मिकों की सेवा संबंधी शर्तो पर समिति 1965–1968

इन संस्थाओं के कार्मिको की अकुशलता सर्वविदित है। इन संस्थाओं में वे ही कार्मिक पहुँचते है जो निजी संस्थानों, केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों द्वारा छाँट दिये जाते है

चूंकी किसी भी संस्था की कार्यकुशलता उसके कार्मिको पर निर्भर होती है। अतः इन संस्थाओं की कार्यकुशलता का स्तर अत्यन्त ही निम्न होता है।

प्रारम्भ से ही इन संस्थाओं को अपने कर्मचारियों का चयन करने, उनकी सेवा की शर्त आदि निर्धारित करने तथा अनुशासनात्मक कार्यवाही करने को अधिकार रहा है। एक संस्था से दूसरी संस्था में उनका स्थानान्तरण सम्भव नहीं है। इस पृथक कार्मिक व्यवस्था के फलस्वरूप नगरपालिका प्रशासन में अनेक दोष व्याप्त हो जाते हैं। इन दोषों का निराकरण करने के लिए कई बार एकीकृत अथवा समाकलित सेवाओं की मांग भी की जाती है।

फलतः स्थानीय स्वायत्त शासन की केन्द्रीय समिति ने सन् 1965 में इन संस्थाओं के कार्मिकों की सेवा की शर्तों का अध्ययन करने हेतु एक समिति की नियुक्ति की इस समिति के महत्त्वपूर्ण सुझाव इस प्रकार थे –

- इन संस्थाओं के लिए राज्य स्तर पर सेवाएँ संगठित की जानी चाहिए।
- यद्यपि प्रारम्भ में आवश्यकतानुसार एकीकृत अथवा समाकलित सेवाओं की व्यवस्था की जानी चाहिए। पर ऐसा करने का उद्देश्य अन्ततोगत्वा इन सेवाओं को राज्य सेवा का अंग बना लेना होना चाहिए।
- समिति की राय में इससे इन संस्थाओं को योग्य कर्मचारी मिल सकेंगे तथा कर्मचारियों को उचित वेतन तथा सेवा की शर्त उपलब्ध हो सकेंगी।

वर्तमान में नगरीय स्थानीय–स्वशासन व्यवस्था

नगरीय स्थानीय शासन संस्थाओं में लोकतान्त्रिक प्रक्रिया को सुचारू एवं व्यवस्थित बनाने हेतु भारत द्वारा निरंतर प्रयास किए गए है जिनमें सन् 1992 का 74वाँ संविधान संशोधन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि नगरों में स्थानीय स्वशासन संस्थाएँ कार्यरत थी लेकिन नियतकालीन चुनावों के अभाव में अधिकांशतः वे सुप्त अवस्था में ही थी । 74वें संविधान संशोधन द्वारा नगरीय स्थानीय संस्थाओं को न केवल संवैधानिक दर्जा दिया

गया वरन् पूरे देश में इन संस्थाओं में एकरूपता सुदृढ़ता एवं नियमितता लाने का प्रावधान किया गया ।

74वॉ संविधान संशोधन अधिनियम 1992

संसद द्वारा दिसम्बर 1992 में नगरीय स्थानीय स्वशासन से संबंधित 74वॉ संविधान संशोधन विधेयक पारित किया गया और राष्ट्रपति के हस्ताक्षरों के पश्चात् यह 1 जून 1993 से सम्पूर्ण देश में लागू हो गया। इस अधिनियम के अनुसार संविधान में एक नया भाग 9 (क) एंव 12वीं अनुसूची को जोड़ा गया। इसमें कुल 18 विषय सम्मिलित है इस संविधान संशोधन की निम्नलिखित मुख्य विशेषताएँ हैं[1] –

- **नगर निकायों का गठन–**

  74वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 के अर्न्तगत सम्पूर्ण भारत में नगरीय स्थानीय स्वशासन की इकाईयों को तीन स्तर पर गठन की व्यवस्था करता है।

1. नगर पंचायत

किसी संक्रमण क्षेत्र के लिए अर्थात ऐसा क्षेत्र जो ग्रामीण क्षेत्र से नगरीय क्षेत्र में संक्रमित हो गया है।

2. नगरपालिका परिषद

इसका गठन छोटे नगरों के लिए किया जाएगा।

3. नगरनिगम

यह बड़े स्तर पर शहरी नगरों के लिए किया जाएगा।

उपर्युक्त तीनों इकाईयों का गठन करने का अधिकार राज्य की विधानमण्डल द्वारा निर्मित कानून के द्वारा राज्यपाल में निहित है। राज्यपाल किसी भी औद्योगिक क्षेत्र को उपर्युक्त इकाईयों के गठन से मुक्त कर सकता है। नगरों या संक्रमण की प्रक्रिया में या किसी भी उपर्युक्त इकाई की गठन की प्रक्रिया निम्न बातों के आधार पर परिभाषित

---

1. **सावाले, द्वारका प्रसाद, "लोकप्रशासन"** एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2006.

करेगा–

- उस क्षेत्र की जनसंख्या,
- उस क्षेत्र की जनसंख्या का घनत्व,
- उस क्षेत्र की स्थानीय प्रशासन में आय का भाग,
- गैर कार्यों में नियोजन का प्रतिशत,
- अन्य आर्थिक कारक जो राज्यपाल द्वारा निर्धारित किए गए हों।

- **नगरपालिकाओं की संरचना**

समस्त नगर निकायों में सभी स्थानों की पूर्ति प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा की जायेगी। इस हेतु प्रत्येक नगरपालिका क्षेत्र को प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजित कर दिया जाएगा जो वार्डो के रूप में ज्ञात होंगें। राज्य का विधानमण्डल, विधि द्वारा किसी नगरपालिका निकाय में निम्नलिखित के प्रतिनिधित्व के लिए भी व्यवस्था कर सकता है–

i. नगरपालिका प्रशासन में विशेष ज्ञान व अनुभव रखने वाले व्यक्तियों के लिए किन्तु इन्हें मत देने का अधिकार नहीं होगा।

ii. नगरपालिका निर्वाचन क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने वाले लोकसभा के सदस्यों अथवा राज्य विधान सभा के सदस्यों के लिए

iii. नगरपालिका क्षेत्र में निर्वाचन के रूप में रजिस्ट्रीकृत राज्यसभा के सदस्यों, अथवा राज्य की विधान परिषद के सदस्यों के लिए ।

अधिनियम में यह भी व्यवस्था की गई है किसी नगरपालिका के सभापति के निर्वाचन की रीति के संदर्भ में राज्य विधानमण्डल प्रावधान करेगा।

- **वार्ड समितियों का गठन**

अधिनियम में प्रावधान किया गया है कि किसी ऐसी नगरपालिका के प्रादेशिक क्षेत्र में जिसकी जनसंख्या तीन लाख या उससे अधिक हैं, वार्ड की समितियों का गठन

होगा जिसमें एक या एक से अधिक वार्ड होंगे। राज्य विधानमण्डल विधि द्वारा वार्ड समिति की संरचना और प्रादेशिक क्षेत्र तथा स्थानों को भरने की रीति के संबंध में प्रावधान कर सकेंगे। वार्ड समिति के क्षेत्राधिकार में आने वाले वार्ड के प्रतिनिधि उस समिति के सदस्य होंगे। समिति के सदस्य अपने में से वार्ड समिति के सभापति का चुनाव करेंगें। राज्य विधानमण्डल वार्ड समितियों के अलावा अन्य समिति का भी गठन कर सकते हैं।

- **स्थानों का आरक्षण**

(i) **अनुसूचित जातियों, जनजातियों के लिए आरक्षण**

प्रत्येक नगर निकाय क्षेत्र में अनुसूचित जातियों व जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित होंगे। यह आरक्षण इन वर्गों की जनसंख्या के अनुपात में होगा तथा ऐसे आरक्षित स्थानों का आवंटन किसी नगर निकाय के निर्वाचन क्षेत्रों के चक्रानुक्रम में किया जागया।

(ii) **महिलाओं के लिए आरक्षण**

प्रत्येक नगर निकाय में निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या का कम से कम एक तिहाई महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे जिनमें अनुसूचित जाति/जनजाति की महिलाओं के लिए आरक्षित स्थान भी सम्मिलित हैं। ऐसे आरक्षित स्थानों का आवंटन विभिन्न नगर निकायों के निर्वाचन क्षेत्रों में चक्रानुक्रम से किया जाएगा।

(iii) **अध्यक्ष/सभापति के पद हेतु आरक्षण**

राज्य विधानमण्डल विधि द्वारा निर्धारित तरीके से नगर निकायों के सभापति के पद के लिए अनुसूचित जातियों, जनजातियों एवं महिलाओं के लिए स्थान आरक्षित कर सकेंगें ।

(iv) पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण

राज्य विधानमण्डल किसी नगर निकाय में अथवा सभापति के पद हेतु पिछड़े वर्ग स्थानों का आरक्षण कर सकेंगें ।

• नगरपालिकाओं का कार्यकाल

पूरे देश में नगर निकायों का कार्यकाल 5 वर्ष निर्धारित किया गया है। अधिनियम में इस संदर्भ में व्यवस्था है कि प्रत्येक नगर निकाय यदि वह उस समय प्रकृत किसी विधी कि अधीन पहले ही विघटित नहीं की गई हैं, तो अपनी प्रथम बैठक की नियुक्त तारीख से 5 वर्षों तक निरन्तर बनी रहेगीं, उसके बाद नहीं। किसी नगर निकाय को विघटित करने से पूर्व सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर देना होगा । किसी नगर निकाय के गठन के लिए निर्वाचन उस नगर निकाय का विघटन किया गया तो उसके विघटन की तारीख से छः माह की अवधि समाप्त होने के पूर्व निर्वाचन करा लिये जाएंगे किन्तु यदि विघटन के समय उस नगर निकाय के निर्धारित कार्यकाल के पूर्ण होने में छः माह से कम अवधि का समय शेष रहता है तो निर्वाचन कराना आवश्यक नहीं है कोई नगर निकाय जिसका गठन किसी नगर निकाय की अवधि समाप्ति के पूर्व उसके विघटन पर किया गया है तो उसका कार्यकाल केवल उस शेष अवधि तक ही रहेगा, जिस अवधि तक नगर निकाय विघटित नहीं होती।

• सदस्यता के लिए अयोग्यताएँ

कोई व्यक्ति किसी नगर निकाय के सदस्य के रूप में निर्वाचित होने व बने रहने के लिए अयोग्य होगा यदि वह किसी विधि द्वारा राज्य विधानमण्डल कि निर्वाचनों के लिए अयोग्य हैं परन्तु कोई व्यक्ति इस आधार पर अयोग्य नहीं होगा कि उसकी आयु 25 वर्ष से कम है। यदि उसने 21 वर्ष की आयु पूरी कर ली है। राज्य विधानमण्डल विधि द्वारा सदस्यता सम्बन्धी अयोग्यताएँ निर्धारित कर सकते हैं। सदस्यों की अयोग्यताओं के सम्बन्ध में विवाद उठने पर उसका निपटारा ऐसे अधिकारी द्वारा ऐसी रीति से किया जाएगा जैसा कि राज्य विधानमण्डल उपबन्धित करे।

• नगर निकायों की शक्तियाँ , प्राधिकार एवं दायित्व

संविधान के उपबन्धों के अधीन रहते हुए किसी राज्य का विधानमण्डल विधि द्वारा नगर निकायों को ऐसी शक्तियाँ और प्राधिकार प्रदान कर सकता है जो कि उनको स्वशासन की संस्था के रूप में कार्य करने के लिए समर्थ बनाने हेतु आवश्यक हों और ऐसी शक्तियों और उत्तरदायित्वों में आर्थिक विकास व सामाजिक न्याय के लिए योजनाएँ तैयार करना, ऐसे कार्यों का निष्पादन व कार्यक्रमों का प्रवर्तन जो उन्हें सौंपे जाये जिसमें 12वीं अनुसूची में सूचीबद्ध मामलों से सम्बन्धित विषय भी सम्मिलित हों।

• वित्त आयोग का गठन

अनुच्छेद 243 झ के अधीन गठित वित्त आयोग नगर निकायों की वित्तीय स्थिति का भी पुनराविलोकन करेगा और निम्नलिखित के सन्दर्भ में सिद्धान्तों की सिफारिश राज्यपाल करेगा।

(i) राज्य सरकार द्वारा लगाये गये करों, शुल्कों, पथकरों और फीसों से हुई आय का राज्य सरकार एवं नगर निकायों के बीच वितरण।

(ii) ऐसे करों, शुल्कों, पथकरों और फीसों का अभिनिर्धारण जो कि नगर निकायों द्वारा आरोपित करने हेतु उन्हें सौंपे जा सकते हैं।

(iii) राज्य की संचित निधि से नगर निकायों को दिये जाने वाले सहायता अनुदान।

(iv) नगर निकायों की वित्तीय स्थिति मे सुधार के लिए आवश्यक उपयों की सिफारिश ।

(v) नगर निकायों के ठोस वित्त के हित में राज्यपाल द्वारा वित्तीय आयोग को निर्दिष्ट किसी अन्य विषय पर ।

वित्त आयोग द्वारा की गई प्रत्येक सिफारिश को राज्यपाल अपने स्पष्टीकरण ज्ञापन सहित राज्य विधानपण्डल के समक्ष प्रस्तुत करेगा।

• नगर निकायों का लेखा–परीक्षण

किसी राज्य का विधानमण्डल विधि द्वारा नगर निकायों के लेखाओं के अनुरक्षण तथा लेखाओं के लेखा–परीक्षण के संदर्भ में उपबन्ध कर सकेगा।

राज्य निर्वाचन आयोग की व्यवस्था

नगर निकायों के समस्त निर्वाचनों के मतदाताओं की सूची तैयार करने के लिए अधीक्षण, निर्देश और नियंत्रण तथा उनका संचालन राज्य निर्वाचन आयोग करेगा। इन उपबन्धों के अधीन राज्य का विधानमण्डल इस सम्बन्ध में विधि द्वारा प्रावधान कर सकेगा। किसी नगर निकाय का कोई निर्वाचन प्रश्नगत नहीं किया जाएगा। सिवाय निर्वाचन पिटीशन के जो कि ऐसे अधिकारों की ओर ऐसी रीति से प्रस्तुत किया जाएगा जो कि किसी राज्य के विधानमण्डल द्वारा निर्मित विधि द्वारा या उसके अधीन उपबन्धित किया जाएगा।

• संघ राज्यों में प्रवर्तन

इस भाग के समस्त उपबन्ध केन्द्र शासित प्रदेशों पर भी लागू होंगें।

• कतिपय क्षेत्रों में इस भाग का लागू न होना

संविधान के अनुच्छेद 244 के खण्ड (1) में निर्दिष्ट अनुसूचित क्षेत्रों तथा खण्ड (2) में अनुसूचित जनजाति क्षेत्रों पर ये प्रावधान लागू नहीं होंगें। पश्चिमी बंगाल में दार्जलिंग जिले के पहाड़ी क्षेत्रों में गोरखा हिल परिषद् के कार्य व शक्तियाँ इससे प्रभावित नहीं होगें।

• जिला योजना के लिए समिति

प्रत्येक राज्य में जिला स्तर पर एक जिला योजना समिति का गठन किया जाएगा जो जिले में पंचायतों व नगर निकायों द्वारा तैयार की गई योजनाओं का अवलोकन करेगी और सम्पूर्ण जिले के लिए एक विकास योजना का प्रारूप तैयार करेगी। राज्य विधानमण्डल विधि द्वारा जिला योजना समिति की संचरना, स्थानों को भरे जाने की

रीति, कार्य और सभापतियों के निर्वाचन की रीति के सम्बन्ध में आवश्यक उपबन्ध करेगा।

- **महानगरीय योजना के लिए समिति**

प्रत्येक महानगर क्षेत्र में एक महानगरीय योजना समिति का गठन किया जायेगा जो सम्पूर्ण रूप से महानगर क्षेत्र के लिए एक विकास योजना प्रारूप तैयार करेगी। राज्य विधानमण्डल द्वारा इन समितियों की संरचना, स्थानों के भरे जाने की रीति, महानगरीय क्षेत्र की योजना और समन्वय से संबंधित कार्य तथा ऐसी समितियों के सभापति चुनने की रीति तय करेगा। प्रत्येक महानगरीय योजना समिति का सभापति समिति द्वारा संस्तुष्ट की गई विकास योजना को राज्य सरकार को अग्रेषित करेगा।

उपरोक्त विशेषताओं से स्पष्ट है कि 74वें संविधान संशोधन विधेयक द्वारा नगरीय निकायों को संवैधानिक मान्यता प्राप्त हो गई है। इन निकायों में अनुसूचित जातियों/जनतातियों तथा महिलाओं को आरक्षण तथा पिछड़े वर्गों को आरक्षण प्रदान किया गया है। जिससे ये वर्ग राजनीतिक सत्ता के सर्म्पक में आएंगे। स्थानीय प्रशासन में जनभागीदारी में वृद्धि होने से नगरीय क्षेत्रों में प्रदूषण, सफाई, पानी, बिजली जैसी समस्याओं के समाधान हेतु पार्षद् अपनी आवाज मुखरित करने लगे हैं। यदि जनता में जागरूकता हो तो निश्चित ही वे अपनी समस्याओं का समाधान कर पाऐंगें।

इस प्रकार उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि भारत में स्थानीय स्वशासन नया नहीं हैं वरन् इसकी जड़े इतिहास में सभ्यता के प्रारम्भ से ही विद्यमान रहीं हैं। लोकतान्त्रिक विकेन्द्रकरण के आधार पर स्थानीय स्वशासन को अपनाया गया है जिसके तहत जनसाधारण को अपनी आवश्यकताओं एवं मांगों को अभिव्यक्त करने का समुचित अवसर मिल सके। नगरीय स्थानीय स्वशासन का मॉडल यद्यपि ब्रिटिश शासन की देन है। फिर भी स्वाधिनता प्राप्ति के बाद संगठन, स्वरूप तथा कार्यों में कई उतार चढ़ाव आये हैं। भारत सरकार ने इन निकायों की समस्याओं के समाधान, संगठन, विकास तथा कार्यों, शक्तियों एवं दायित्यों के संदर्भ में अनेक समितियों का गठन किया है। इन

समितियों के विभिन्न सुझावों के द्वारा ही स्थानीय निकायों की स्थिति को सुदृढ़ करने में सहायता भी मिली है। इसी संदर्भ में 74वें संविधान संशोधन अधिनियम के द्वारा नगर निकायों को संवैधानिक, सशक्त, सुदृढ़ सुनिश्चित बनाने के पीछे उद्देश्य लोकतन्त्र को वास्तविक एवं व्यवहारिक बनाना रहा है। वर्तमान में नगरीकरण, औद्योगिकरण, ज्ञान–विज्ञान, तकनीकि एवं संचार क्रांति के युग में बढते हुए नगरो के महत्त्व को स्वीकार करते हुए इस संशोधन द्वारा नगरीय स्तर पर स्थानीय संस्थाओं को जनता के कष्टों का निवारण करने तथा नगरीय विकास में जनता की भागीदारी बढाने की आशा की गई है। इसी आधार पर प्रस्तुत शोध प्रबन्ध "**नगरीय स्थानीय स्वशासन निकायों में निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों की राजनीतिक सहभागिता : हरियाणा राज्य के कुरूक्षेत्र जिले के संदर्भ में एक अध्ययन**" का चयन किया गया है।